© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 8 | Print ISSN : 2395-6011 | Online ISSN : 2395-602X

प्राचीन भारत में व्यापार–वाणिज्य कर

डॉ दानपाल सिंह
0177A काजीपुरखुर्द,
गोरखपुर, उ0प्र0।

राज्य द्वारा व्यापार पर उचित कर लिया जाता था। कर लेने के सिद्धान्त का आधार था कि चूँकि राज्य मार्ग की आपत्तियों से व्यापारियों की रक्षा करता है, अतः वह उनसे कर लेता है।[1] वाणिज्य के मार्गो पर तथा ग्रामों और नगरों के प्रवेश–द्वारों पर शुल्क शालायें बनाई जाती थी। उनमें शैल्किक नामक अधिकारी शुल्क एकत्रित करते थे। वे आने वाले माल की संख्या, परिमाण, गुण आदि की परीक्षा करके कर की मात्रा को सुनिश्चित करते थे। स्थान–विशेष के रिवाज के अनुसार अथवा कर दाता की सहूलियत के अनुसार कर को नकद रूप में या वस्तु के रूप में लिया जा सकता था।

कर से बचना अपराध था। कर से बचने के लिए तौल–माप और मूल्यों को कम बताने पर, निषिद्ध मार्ग से ले जाने पर और निश्चित समय से अतिरिक्त समय में ले–जाने पर दण्ड लिया जा सकता था। यह मूल्य का आठ गुना तक हो सकता था।[2] निषिद्ध माल के ले जाने पर सारा माल जब्त किया जा सकता था।

व्यापार पर सामान्यतः तीन प्रकार का कर लगता था– लाभ पर कर, आयात पर कर और विक्रय पर कर। लाभ पर 5 प्रतिशत कर लगाने का विधान था।[3] आयात किये जाने वाले माल पर, क्रय–विक्रय के भाव, मार्ग की दूरी, नौकर आदि के वेतन और भोजन का व्यय, रक्षा का व्यय और लाभ का विचार करके कर लिया जाता था।[4] इसको राज्य की सीमाओं में प्रवेश करते समय वर्तनी के रूप में अथवा नगरों के प्रवेश द्वार पर शुल्क के रूप में लिया जाता था।

इसमें प्रायः पथकर या चुंगी, पारवहन शुल्क, सीमाशुल्क आदि आते हैं। अर्थशास्त्र जिसमें अन्य विषयों की भांति इस विषय का भी सर्वाधिक पूर्ण विवरण पाया जाता है इस शीर्ष के अंतर्गत दिये गये प्रभार की दृष्टि से दो पृथक वर्गो का उल्लेख करना है।

क– दुर्ग
ख– ग्रामीण प्रदेश (राष्ट्र)

दुर्ग वर्ग ने अंतर्गत अर्थशास्त्र[5] में अन्य करों के अतिरिक्त निम्नलिखित पांच करों का उल्लेख है–

1– शुल्क (पथकर, या चुंगी)
2– द्वारादेय (नगरद्वार पर वसूल किया जाने वाला शुल्क)
3– सुरा (शराब)
4– पौतवम (बाट और माप), तथा

5– पण्यसंस्था (बाजार)

जहाँ तक शुल्क और द्वारा देय का संबंध है, शुल्काध्यक्ष के कार्यों का वर्णन करते हुए कौटिल्य कहते हैं[6] कि आयात तथा निर्यात दोनों के लिए शुल्क उन वस्तुओं पर लगाया जाना चाहिए, जिनका ग्रामों और राजधानी में उत्पादन हो और उन पर भी जो राज्य के बाहर से लाई जांए।[7] आयातित वस्तुओं पर शुल्क की दर वस्तु के मूल्य का प्रायः पंचामांश बताई गयी है।[8]

इसके अतिरिक्त शुल्क का पांचवा भाग द्वारदेय के रूप में वसूल किया जाना चाहिए किन्तु संबद्ध मामले की परिस्थितियों और वस्तुविशेष की उपयोगिता के अनुसार इतनी ही राशि की छूट देने का विधान किया गया।[9] अर्थशास्त्र में वर्णित पथकर व्यवस्था संबंधी प्रमुख विशेषताएं हैं–

1– शुल्क वस्तुरूप में नही अपितु नकद रूप में लिया जाता था। यह शुल्क प्रत्यक्षतः वसूली करने वालों द्वारा वस्तुओं का मूल्यांकन करके ही लिया जाता था। बहुमूल्य वस्तुओं के मूल्यांकन के लिए विशेषज्ञों और पारखियों की नियुक्ति की जाती थी।

2– तीन श्रेणियों की वस्तुओं पर शुल्क ह्रासमान दर से लगाया जाता था। सुविधा की दृष्टि से हम इन्हें नाशवान वस्तुएं, बहुमूल्य उत्पादन और साधारण वस्तुएं कह सकते हैं इस प्रकार की विशद व्यवस्थाएं स्पष्टतः राजस्व की इस शाखा के विकास की कुछ उन्नत अवस्था की द्योतक है।

शुल्क के सन्दर्भ में एक अन्य प्रकार की आय का उल्लेख किया जा सकता है, जो राजा को चुंगीघर से एक ही स्थान पर व्यापारिक वस्तुओं की प्रचलित बिक्री व्यवस्था से प्राप्त होती थी। कौटिल्य का कथन है कि ग्राहकों में पारस्परिक प्रतिद्वंद्विता के कारण किसी वस्तु का मूल्य बढ़ा दिये जाने पर शुल्क के साथ अतिरिक्त मूल्य राजकीय कोष में जाना चाहिए। पुनश्च यदि एक खरीददार की दूसरे खरीददार से स्पर्धा के फलस्वरूप किसी वस्तु का मूल्य स्वयं ले लेना चाहिए अथवा उस मूल्य बढ़ाने वाले खरीददार से दुगुना जुर्माना वसूल करना चाहिए। इससे स्पष्ट है कि वस्तुओं की दरे राज्य विनियम द्वारा निश्चित की जाती थी[10] और नियत दर में किसी प्रकार की वृद्धि होने पर उसे राजा जब्त कर सकता था। **नीतिवाक्यामृत**[11] में भी वर्णित है कि जब विक्रय वस्तु का मूल्य प्रतिद्वंद्विता के द्वारा निर्धारित किया जाए और वह नियत दर से अधिक बढ़ जाए तो वह वृद्धि राजा को प्राप्त होनी चाहिए।[12]

कौटिल्य का यह निर्देश है कि आयातित तथा निर्यातित वस्तुओं पर शुल्काध्यक्ष द्वारा चुंगीघर में ही चुंगी वसूल की जानी चाहिए। यह निश्चय किया गया है कि जो व्यापारी अधिक चुंगी देने के डर से अपने माल के परिमाण और मूल्य को कम करके बताए अथवा बहुमुल्य पण्य (माल) को छलपूर्वक छिपाए तो उस व्यापारी से शुल्क का आठ गुना जुर्माना वसूल किया जाय अथवा वह माल राजा द्वारा जब्त कर लिया जाय। समाज में कर की चोरी करने वाले व्यक्ति विद्यमान थे, इसका संकेत बौद्ध ग्रन्थ विनयपिटक से मिलता है। इसके **पाचित्तिय**[13] पालि में उल्लेख हैं कि एक भिक्षु कुछ यात्रियों के साथ पकड़ा गया था जो चोरी से कुछ चीजें ले जा रहे थे। अंगुत्तर निकाय के टुकनिपात के एक सुत्त में भी अपराधी भिक्षु की उपमा उस व्यक्ति से दी गयी है जो बिना चुंगी चुकाये माल ले जाने का अपराधी होता है।

शुल्क वसूली को सुविधापूर्ण बनाने के लिए यह सामान्य नियम भी बनाया गया है कि कोई भी वस्तु उसके उत्पादन स्थान पर न बेची जाय। अर्थाशास़्त्र शुल्क सम्बन्धी नीति की रूपरेखा भी प्रस्तुत करता है।

उदाहरणार्थ अनेक वस्तुओं को शुल्क से सर्वथा मुक्त रखा गया है। इनके अन्तर्गत विवाह के लिए या पतिगृह जाने वाली वधू के लिए अथवा उपहार के लिए या यज्ञकर्म के लिए, देवपूजा के लिए तथा यज्ञोपवीत आदि के लिए अपेक्षित वस्तुएं हैं। दूसरी ओर शस्त्र, पशुचर्म, कवच, निम्न धातु, रथ, अन्न और पशु आदि निषिद्ध वस्तुओं के निर्यात के लिए जुर्मानों तथा वस्तुओं की जब्ती का विधान किया गया है।

अर्थशास्त्र में एक स्थान पर[14] संस्थाध्यक्ष (बाजार का अध्यक्ष) नामक अधिकारी का उल्लेख है, जिसका कार्य बाजार में पुरानी वाणिज्य वस्तुओं की बिक्री और उन्हें गिरवी रखने जैसे कार्यो का निरीक्षण करना है। वाणिज्य वस्तुओं का अध्यक्ष (पण्याध्यक्ष) नामक एक अन्य अधिकारी का भी उल्लेख प्राप्त होता है, जिसका काम विविध वस्तुओं की कीमतें नियत करना बताया गया है। इस सिलसिले में तौल और माप में कमी करने पर तथा खरीददारों से किये गये छल, मूल्यों में अवैध वृद्धि करने के लिए विविध धनराशियों के जुर्माने का विधान किया गया है। संभवतः कौटिल्य द्वारा सामूहिक रूप से उल्लिखित संस्था नामक राजस्व में इन सभी मदों से वृद्धि होती थी।

कौटिल्य ने कहा है कि समुद्र, नदियों तथा झीलों के तट पर बसे हुए ग्रामीणों को चाहिए कि वे राजा को नियत कर (क्लिप्त) दें। यह कर स्पष्टतः नौकाध्यक्ष द्वारा की गयी सेवाओं के बदले में दिया जाता था। मछुआरों को नाव के किराये के रूप में अपनी आय का छठां भाग राजा को देना चाहिए।[15] व्यापारियों (वणिक) को चाहिए। कि वे बंदरगाहों (पत्तन) के उपयोग के अनुसार राजा को शुल्क (शुल्क भाग) दें। राजकीय जहाजों से यात्रा करने वालों को भी यात्रा का किराया राजा को देने का विधान मिलता है। शंख और मोती निकालने का व्यवसाय करने वाले व्यापारी अपनी नौकाओं से यात्रा करें इसी संदर्भ में यह कहा गया है कि तुफान में फंस जाने के कारण क्षतिग्रस्त नौकाओं पर नौकाध्यक्ष को दया दृष्टि रखनी चाहिए। उसे क्षतिग्रस्त माल का कर नही लेना चाहिए। नौकाध्यक्ष के अधिकार–क्षेत्र में आने वाले समुद्र मार्ग से यात्रा करने वाले जहाजों को चाहिए कि वे नौकाध्यक्ष को शुल्क दे। इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि उस समय दो प्रकार की नौकाएं प्रयोग में लायी जाती थीं।

1– राजकीय नौकाएं जिनका प्रयोग नौका–भाड़ा अथवा समान राशि देकर किया जा सकता था, और
2– निजी नौकाएं जिन्हें प्रत्यक्षतः शुल्क देना पड़ता था। इसके अतिरिक्त बन्दरगाहों के स्थानीय प्रचलन के अनुसार भी व्यापारियों को शुल्क देना पड़ता था। कौटिल्य ने शुल्काध्यक्ष सम्बन्धी अध्याय में पारवहन शुल्क (वर्तनी) की एक अन्य सूची भी दी है। ये शुल्क प्रत्यक्षतः व्यापारिक वस्तुओं पर भू–सीमा पर वसूल किये जाते थे।[16]

विनयपटिक में इस बात का विशेष रूप से उल्लेख[17] किया गया है कि राजा पहाड़ियों पर, नदियों के स्थान–स्थलों (घाटों) पर तथा ग्रामों के प्रवेश द्वारा पर शुल्कों (शुंग) की वसूली के लिए शुल्कस्थान (सुंकूघाट) स्थापित किया करते थे। ईसवी सन् तीसरी शताब्दी के पूर्व रचित बौद्ध कथा संग्रह दिव्यावदान में व्यापारियों द्वारा पथकर तथा अन्य शुल्क दिये जाने का बार–बार उल्लेख है। इस प्रकार एक कथा[18] में एक गृहपति समुद्र यात्रा के लिए उद्यत उसके पुत्रों के साथ, बिना चुंगी (शुल्क) और मालभाड़ा (तरपण्य) दिये जाने के इच्छुक सभी लोगों को घण्टी बजाकर बुलाते हुए कहता हैं कि वे समुद्रपार ले जाने योग्य वस्तुएँ लेकर आ जायं। एक अन्य कथा[19] में इसी प्रकार एक व्यापारी उन सभी व्यक्तियों को आमंत्रित करता है जो बिना चुंगी (शुल्क) सैनिक अथवा पुलिस चौकियों पर दिये जाने वाले शुल्क (गुल्म) और मालभाड़ा दिये, समुद्र यात्रा में इनके साथ जाने के इच्छुक हैं। एक तीसरी कथा[20] में सैनिक अथवा पुलिस चौकियों पर देय शुल्क अथवा माल–भाड़ा के भुगतान सम्बन्धी चेतावनी को अग्नि, बाढ़ हिंसक पशुओं, चोरों आदि से सावधान करने के लिए

दी जाने वाली चेतावनी के समान माना गया है। यह परिलक्षित होता है कि यहाँ व्यापारियों द्वारा देय उन्हीं शुल्कों की सूची (पथकर, नौघाट शुल्क आदि) दी गयी है, जो अर्थशास्त्र में भी पायी जाती है।[21]

शुल्कों की वसूली के सन्दर्भ में कुछ प्रसंग इस प्रकार के भी प्राप्त होते हैं, जिससे उस समय व्यापारियों के उत्पीड़न पर भी प्रकाश पड़ता है। ऐसे उत्पीड़न स्पष्टतः अवैध रूप से, व्यापारियों से बलपूर्वक द्रव्य अथवा वस्तु लेकर किये जाते थे। इसका स्पष्ट उल्लेख एक अन्य स्थान पर हुआ है, जहाँ कौटिल्य ने विभिन्न प्रकार के उत्पीड़नों (पीड़नों) का वर्णन किया है। इस सम्बन्ध में हम एक जातक कथा[22] का उल्लेख कर सकते हैं जिसमें कहा गया है कि किस प्रकार एक राजकुमार ने एक बुद्धिमान व्यक्ति की सलाह से व्यापारियों पर पथकर निश्चित करके राजा और प्रजा दोनों का कृपापात्र बनने का प्रयत्न किया यह व्यापारियों के उत्पीड़न के एक अन्य स्रोत की ओर संकेत करता है, क्योंकि पथकर की दर नियत नहीं थी।

संदर्भ सूची

1– मार्गसंस्काररक्षार्थ मार्गगेभ्यः फलं हरेत्। शुक्रनीति, 4.2.25

2– शुल्कस्थनं परिहरन्नकाले क्रयविक्रयी।
मिथ्यावादी च संख्याने दाप्योऽष्टगुणमत्ययम्।। मनुस्मृति, 8.400

3– शुल्कस्थामेषु कुशलाः सर्वपण्यविचक्षणाः।
कुर्युरघं यथापण्यं ततो विशं नृपो हरेत्।। मनुस्मृति, 8.398

4– क्रयविक्रयमध्वानं भक्तं च सपरिश्रमम्।
योगक्षेमं च सम्प्रदक्ष्य वणिजो दापयेत् करान्।। मनुस्मृति, 8.127

5– अर्थशास्त्र, 2, 6

6– अर्थशास्त्र, 2, 21

7– वाह्ययमायंतरञ्चातिथ्यं को भट्टनारायण ने उपर्युक्त रूप में लिया है, शाम और गण ने इसका यद्यपि यथावत अनुसरण किया है तथा मेयर ने इसे परिवर्तित रूप में स्वीकार किया है पृ0 712. 713

8– स्मिथ, वी0ए0 अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, चतुर्थ संस्करण, पृ0 150 : अर्थशास्त्र के प्रस्तुत कथन को इस अर्थ में लेते हैं – "विदेशों से आयातित वस्तुओं पर विभिन्न प्रकार के सात कर नियमतः लगाये जाते थे, जिनका कुल योग लगभग 20% है" किन्तु इस कथन की पुष्टि में कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

9– कौटिल्य 2, 22 के अन्तिम श्लोक में कहते है कि नये ओर पुराने माल पर पथ कर तथा जुर्माने स्थानीय और प्रचलित प्रथा के अनुसार लिये जाने चाहिए। इससे यह प्रकट होता है कि एक ही प्रकार की नयी और पुरानी वस्तुओं पर अलग–अलग दरों के अनुसार शुल्क वसूल किये जाते थे। मेगास्थनीज भी मौर्य साम्राज्य की राजधानी पाटलिपुत्र के प्रशासन का वर्णन करते हुए नयी तथा पुरानी वस्तुओं के अलग–अलग बेचे जाने का उल्लेख करता है।

10– अर्थशास्त्र, 4, 2

11– नीतिवाक्यामृत, 8, 18

12– अर्थशास्त्र, 2, 21

13– विनयपिटक की पाचित्तिय पालि, पृ0 176, श्री नालन्दा संस्करण

14– कौटिल्य, 4, 2

15– शाम के संस्करण में पाये जाने वाले वैकल्पिक पाठ नौकाहाटकम् (मछली मारने के लिए लाइसेंस) को गण तथा मेयर ने अस्वीकार कर दिया है।

16– कौटिल्य 2, 21

17– विनय पिटक, 3, 52

18– तत्रैव, पृ0 4

19– तत्रैव, पृ0 501

20– विनय पिटक, पृ0 92

21– उच्छ्वास 8, 1 (बंबई संस्करण) 1919 पृ0 132

22– जातक, खण्ड, 4, पृ0 132